कोरोना से लड़ाई में भारतीय संस्कृति कैसे बनी मददगार, समझिए

jansatta.com/blog/allopathy-vs-ayurveda-controversy-row-understand-how-indian-culture-became-helpful-in-the-fight-against-corona-explains-ias-dr-dinesh-chandra-singh/1735425/

June 4, 2021

बेकार है आयुर्वेद-एलोपैथी विवाद। भारतीय संस्कृति में निहित चिकित्सकीय विधाओं के सामंजस्य भाव को समझिए।

जनसत्ता ऑनलाइन नई दिल्ली | Updated: June 4, 2021 2:34 PM

ऐलोपैथी विवाद को लेकर नई दिल्ली में 25 मई, 2021 को एम्स अस्पताल के डॉक्टरों ने योग गुरु रामदेव के खिलाफ विरोध प्रदर्शन किया था। (फाइल फोटोः पीटीआई)

डॉ दिनेश चंद्र सिंह (आईएएस)

महामारी काल में जिस तरह से भारतीय संस्कृति की उपादेयता स्वयंसिद्ध हुई है, उसके दृष्टिगत इसके सकारात्मक पहलुओं को समझना व तदनुकूल आचरण विकसित करना अब सबके लिए जरूरी हो गया है। यदि हमलोग इसकी उपेक्षा करेंगे तो कहीं न कहीं इसके लिए हमें भारी कीमत भी चुकानी होगी। प्रकृति की अवहेलना करके मानव समुदाय जो समसामयिक कीमत चुका रहा है, उससे बचने की नसीहतें भारतीय संस्कृति में काफी अर्से से दी जाती रही हैं, लेकिन हमारा धर्मनिरपेक्ष मिजाज और वैज्ञानिक चकाचौंध हमें समवेत रूप से सोचने-विचारने की फुर्सत कहां देता! और यदि कभी देता भी है तो तथाकथित विकास की गरज से हमलोग उसपर सोचते-विचारते भी नहीं। शायद आयातित जीवन मूल्यों का बढ़ता हस्तक्षेप भी इसके लिए कहीं न कहीं जिम्मेदार अवश्य है, बशर्ते कि हमलोग इसे समझ पाएं।

सवाल है कि संस्कृति क्या है, शब्दकोश उलटने पर इसकी अनेक परिभाषाएं मिलती हैं, परंतु अभी तक की अभिव्यक्त की गई परिभाषाओं में मुझे यदि कुछ प्रभावित एवं अनुकूल लगती है तो वह यह कि "संसार भर में जो भी सर्वोत्तम बातें जानी, समझी या कही गई हैं, उनसे अपने आपको परिचित कराना ही संस्कृति है।" वास्तव में, संस्कृति किसी की शारीरिक या मानसिक शक्तियों का प्रशिक्षण, सुदृढ़ीकरण या विकास अथवा उससे उत्पन्न अवस्था है, जिससे यह

मन, आचार-विचार व रुचियों की परिष्कृति यानी शुद्धि होती है। यह सभ्यता का भीतर से प्रकाशित हो उठना भी है। इस अर्थ में संस्कृति कुछ ऐसी चीज का नाम हो जाता है जो बुनियादी और अंतरराष्ट्रीय है। फिर भी संस्कृति के कुछ राष्ट्रीय पहलू भी होते हैं। अर्थात संस्कृति का विकास अतीत की दीर्घकालिक व्यवस्था की सुदृढ़ता पर निर्भर करता है।

जहां तक भारतीय संस्कृति के विकास की यात्रा का प्रश्न है। तो निःसंकोच कहूंगा कि यह हजारों वर्षों की हमारे संतों, महर्षियों, विद्वान मनीषियों, धर्मगुरुओं व पूर्वजों द्वारा सैद्धांतिक एवं व्यवहारिक संयम, धैर्य, त्याग, बलिदान व पुरुषार्थ अर्थात मन, वचन एवं कर्म का संयम एवं अनुशासन पूर्वक तीनों को मजबूती प्रदान करने वाले तत्वों की प्राप्ति की अनवरत साधना है जो संस्कृति को दृढ़ता प्रदान कर सकती है।

अर्थात हम यदि संस्कृति की उत्कृष्ट परिभाषा दें, तो वह यह होगा कि “संसार भर में जो भी सर्वोत्तम बातें जानी, समझी या कही गई हैं, उनसे अपने आपको परिचित कराना भी संस्कृति है।” अर्थात दुनिया भर की अच्छी चीजों को जानना और जानने की निरंतर जिज्ञासा रखना तथा जानकर अपनी सभ्यता के अनुसार, अपने देश की शासन प्रवृत्ति के अनुसार, देशकालिक भौगोलिक परिस्थितियों के मुताबिक एवं जीवन जीने की शैली की उपयोगिता को दृढ़ता देने वाले तत्वों को सावधानीपूर्वक अपने देश की जनता में प्रचार-प्रसार करने की भावना जागृत कराकर उनको आत्मसात करने की, कभी न थकने वाली पद्धति को जनमानस में आत्मसात कराना ही संस्कृति के विकास को गति दे सकता है।

इस प्रकार “संस्कृति शारीरिक या मानसिक शक्तियों का प्रशिक्षण, सुदृढ़ीकरण या विकास अथवा उससे उत्पन्न व्यवस्था है।” संस्कृति की परिभाषित परिभाषा में विकास की अनेक संभावनाएं हैं और संस्कृति देशकाल परिस्थितियों एवं आवश्यकता के आधार पर ही उत्कृष्ट कारकों, जो हमारी शारीरिक, मानसिक स्थिति को निरंतर दृढ़ता प्रदान करने में सहायक बने, ऐसे तत्वों, ज्ञान को अपना मानकर अपने जीवन में आत्मसात करना हमारी आने वाली संस्कृति के विकास की यात्रा को और पुष्ट करेगी।

अब अपने आप को मात्र 6 वर्ष पीछे लेकर चलते हैं और संस्कृति के उस पहलू को जीवन में आत्मसात करने की संघर्ष यात्रा का वर्णन संक्षिप्त में करते हैं, जहां से हमने हजारों वर्षों की संस्कृति में उपरोक्त परिभाषाओं को पुष्ट करने के लिए बहुत कुछ सीखा एवं आत्मसात किया है।

हमारी सरकार ने स्वच्छता के प्रति संवेदनशीलता दिखाते हुए, स्वच्छता के विभिन्न मानकों को “स्वच्छ भारत अभियान” के माध्यम से अपनाकर और इस बाबत जनता को जागृत कर व्यवहार परिवर्तन के माध्यम से जनमानस में उसकी उपयोगिता को दर्शाया है। क्योंकि स्वच्छता के तत्वों की, शारीरिक मानसिक दृढ़ता के लिए इसकी आवश्यकता को दृष्टिगत रखते हुए ही “खुले में शौच मुक्त भारत” को भारत का सपना बनाने का विषय बहुत बड़ा है। और इसको प्राप्त करने की संघर्ष यात्रा के विषय का पृथक से ही चर्चा यहां करना उचित होगा।

परंतु मैं संक्षेप में यह कहना चाहता हूं कि हमारी संस्कृति के तत्वों ने किस प्रकार कोरोना से बचने की ताकत दी और अभी हाल के वर्षों के प्रयास ने कोरोना प्रोटोकॉल के उपयोगी सिद्धांतों को अनुपालन कराने में कितनी सहायता मिली है; यह हमारी संस्कृति के विगत मात्र 6-7 वर्षों की यात्रा के दौरान व्यापक स्तर पर हुए प्रयास की सफलता की कहानी है। जिसको बल देने एवं आत्मसात कराने की प्रक्रिया में भारत के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी एवं उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ के द्वारा क्रमशः 6 एवं 4 वर्षों में स्वच्छ भारत अभियान के “खुले में शौच मुक्त भारत” के स्वप्न को साकार करने की भागीरथी कोशिश की संघर्ष यात्रा है, जिसमें भारतीय लोकतंत्र के नागरिकों, संस्थाओं और सरकार के अंतर्गत काम करने वाले अधिकारियों व कर्मचारियों के परिश्रम एवं उनकी निष्ठा पूर्वक की गई सेवाओं की आज मैं मुक्त कंठ से प्रशंसा करता हूं।

ऐसा इसलिए कि मैं भी उस यात्रा का अंग रहा हूं और मुझे भी इन लक्ष्यों की पूर्ति के लिए बेहतर कार्य करने का अवसर विभिन्न मुख्य पदों अर्थात मुख्य विकास अधिकारी अलीगढ़, नगर आयुक्त गाजियाबाद, जिलाधिकारी कानपुर देहात के रूप में प्राप्त हुआ था।

बहरहाल, मैं यह नहीं कह सकता कि हम शत प्रतिशत “खुले में शौच मुक्त” बन चुके हैं, परंतु इस दिशा में हमने जो किया है या सरकार कर रही है, वह संस्कृति के विकास एवं स्थायित्व की एक सुदीर्घ प्रक्रिया है, जिसके अनुपालन की दिशा में एक सार्थक एवं मजबूत कदम बढ़ाया जा चुका है।

इसी के चलते आज कोविड-19 के वैश्विक संक्रमण के दौर में होम आइसोलेशन में रोग से प्रभावित एवं उपचारित रोगियों की सुविधा में काम आए व्यक्तिगत शौचालय की उपयोगिता की बात करने के लिए मुझे स्वच्छ भारत अभियान की बात का उल्लेख करना पड़ रहा है। क्योंकि होम आइसोलेशन के लिए पहली शर्त यही थी कि मरीज के लिए व्यक्तिगत शौचालय हो।

जरा सोचिए, यदि एसबीएम के अंतर्गत व्यक्तिगत शौचालय का निर्माण न कराया जाता तथा उसके प्रयोग की व्यवहारिक पद्धति को आत्मसात करने की अलख न जगाई गई होती तो आज कोरोना के संक्रमण से प्रभावित व्यक्तियों के होम आइसोलेशन में इलाज की समुचित व्यवस्था कैसे की जाती। क्योंकि व्यक्तिगत शौचालय का होना होम आइसोलेशन का एक महत्वपूर्ण घटक है, जिसके बिना रोगी के मल त्याग एवं उसके निपटारा की वैज्ञानिक व्यवस्था के अभाव में कोविड 19 संक्रमण के वायरस को रोकने में बहुत कठिनाई होती, क्योंकि आप जानते हैं कि खुले में संक्रमित व्यक्ति के मल त्याग से कितनी तीव्रता से संक्रमण का फैलाव होता।

भारत एवं विश्व के नागरिकों ने ऐसे संतों, मनीषियों, महापुरुषों, वैज्ञानिकों, गुरुओं यथा पतंजलि, चरक, सुश्रुत, स्वामी विवेकानंद, अरविंदो घोष, श्री श्री रविशंकर, साध गुरु और स्वामी रामदेव आदि, जिन्होंने भारतीय चिकित्सा पद्धति के अलावा किसी भी चिकित्सकीय विधा में मानव के कल्याण के लिए कार्य किया है अथवा कर रहे हैं। तभी तो भारतीय संस्कृति द्वारा पोषित, पल्लवित एवं संरक्षित विद्याएं, यथा- व्यायाम, योग, ध्यान साधना एवं प्रकृति से तारतम्य रखने वाली वनस्पतियों पर आधारित व वैज्ञानिक द्वारा प्रगणित आयुर्वेदिक इलाज पद्धति के प्रचार-प्रसार से यह जनमानस में सहजता व सरलता से मानव उपयोगी बना रहा है।

आज हमारा राष्ट्र एवं विश्व के नागरिक भौगोलिक सीमा का परित्याग कर उनको विश्व गुरु एवं ऐसी सम्माननीय उपाधियों से नवाजते अथवा हृदय से संबोधित करते हैं, जिससे यह बोध होता है कि उनके द्वारा मानव कल्याण के हित में की गई सेवा का उत्कृष्ट यश-कीर्ति या विजय पताका फैलाने की उपलब्धि है।

अब समय आ गया है कि सभी के ज्ञान को जनकल्याण के लिए संगठित कर ज्ञान की खोज पर आधारित एवं वैज्ञानिक कसौटी पर कसी हुई एवं परीक्षित तौर-तरीकों का एकजुटता के साथ उपयोग करें।

मसलन, मानव कल्याण के लिए कामायनी की कुछ पंक्तियां यहां उद्धरण के योग्य है, जो सभी के लिए उपयोगी है- ज्ञान, दूर कुछ किया भिन्न है, इच्छा क्यों पूरी हो मन की।। तीनों मिलकर एक ये हो सके। यही विडंबना है जीवन।।

अतः तीनों विधाओं के योग्य व्यक्ति, तीनों विधाओं की उत्कृष्ट खोज की मानव जीवन की रक्षा में नि:स्वार्थ भाव से लगाएं। उसी दशा में मानव की विजय होगी और हमारी भारतीय संस्कृति की विश्व स्तर पर सराहना होगी।

सभी लोग उन विशिष्ट खोज को अपने मानव उपयोगी मानने पर प्रयोग में लाकर भारत की विश्व गुरु की प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति की पुनः पदस्थापना होगी, जिससे उनके आदर्शों का स्वप्न साकार होगा।

कहना न होगा कि हमारी संस्कृति की प्राकृतिक विविधता एवं मानवीय विविधता के विभिन्न तत्वों को एकीकार कर प्रभु राम एवं भगवान श्री कृष्ण तथा अन्य धर्मावलंबियों के धर्मगुरुओं ने अपने उत्कृष्ट ज्ञान से इसे पोषित एवं पल्लवित किया है। जिससे यह विश्व कल्याण के लिए उपयोगी है।

अतः संस्कृति की परिभाषा के अनुसार, सर्वोत्तम बातें जानकर, उन्हें अपने समाज में आत्मसात करने के प्रयास को भी संस्कृति की विकास यात्रा के लिए अत्यंत आवश्यक समझा जाता है।

रही बात आजकल पैदा हुए विवाद दर विवाद की, तो इतना समझ लीजिए कि आयुर्वेद, एलोपैथ व यूनानी चिकित्सा पद्धतियों के विशेषज्ञ में अपने आपको स्थापित करने की जो होड़ मची है, वह निरर्थक है। यहां पर मैं किसी के नाम का उल्लेख नहीं करूंगा। लेकिन सिर्फ इतना कहूंगा ही कि भारतीय समाज में सभी वैज्ञानिक प्रवृत्ति आधारित चिकित्सा पद्धतियों की मानव जीवन की रक्षा करने में अतुलनीय, अनुकरणीय एवं प्रशंसनीय योगदान है।

फिर भी कष्ट एवं पीड़ा इस बात की होती है कि बिना एक दूसरे की पद्धति के उत्तम व उत्कृष्ट तत्वों को ज्ञान की कसौटी पर कसे मात्र, हम अपने को जरूरत से ज्यादा प्रसिद्धि की कामना से उत्पन्न माया, मोह, स्वार्थ के लालच में घेर लेते हैं, जिससे किसी की आलोचना करना प्रारंभ कर देते हैं, जो हर किसी के लिए बेहद कष्टदायक व पीड़ादायक हो जाता है।

यह वास्तव में मानव जीवन की रक्षा के प्रयासों में की जा रही तरह तरह की खोज की जिज्ञासा को कुंठित करने का एक प्रयास भी हो सकता है। क्योंकि जैसे धन के अति लोभ के कारण मनुष्य भ्रष्ट होता है, वैसे ही कीर्ति के लोभ में पड़कर भी व्यक्ति अपने मूल कर्तव्य से च्युत हो जाता है। ऐसा करके हम अपनी यश-कीर्ति को बढ़ाने का जो प्रयास करते हैं, उससे हमारी यश-कीर्ति बढ़ेगी नहीं, बल्कि कहीं न कहीं आपकी कृति को प्रभावित कर आपको अपने कर्तव्यों की पालना से ही च्युत करेगी।

तथाकथित तौर पर आयुर्वेद एवं योग का जनक कहलवाने की लालसा किसी के लिए भी अच्छी नहीं होती है। क्योंकि ऐसे सभी उत्कृष्ट व सच्चे विद्वानों को समाज ने बहुत शोहरत एवं दुआ बख्शी है, जिसके आधार पर आप सभी को आपकी मेहनत, योग्यता एवं त्याग का फल जनता एवं ईश्वर ने दिया है। जिसके बल पर बहुत अल्प अवधि में सभी धन, वैभव एवं कीर्ति की पराकाष्ठा को प्राप्त करने में सफल हुए हैं। परंतु अब जनहित, मानव कल्याण हित एवं राष्ट्र हित में इस प्रकरण की बहस से बचें। साथ ही, आधुनिक युग के प्रमाणिक व वैज्ञानिकों की खोज पर आधारित टीकाकरण को अपनी जीवन शैली में आत्मसात करते हुए एलोपैथी चिकित्सा क्षेत्र से जुड़े वैज्ञानिकों एवं चिकित्सकों के परिश्रम का भरोसा करें और उनकी खोज को सराहें।

वास्तव में, जीवनरक्षक टीका की खोज करने वाले वैज्ञानिकों ने, जिन्होंने आधुनिक युग के राम बनकर एक कल्याणकारी अवधारणा विकसित की एवं कम समय में अपने द्वारा किए गए प्रयासों से जीवनरक्षक टीका विकसित किया, इसलिए उनकी तारीफ अवश्य करें।

कहना न होगा कि जिस प्रकार युद्ध के समय में स्वयं प्रभु राम ने नल-नील की सेतु निर्माण में किए गए कार्यों, अभिनव प्रयासों एवं विशेषज्ञता की प्रशंसा की, उससे आज भी मानव कल्याण के इतिहास में वो अजर-अमर हैं। इसी प्रकार टीके की खोज करने वाले वैज्ञानिक भी अजर-अमर रहेंगे। अभी टीके की खोज व विकास की प्रक्रिया समाप्त नहीं हुई है और वैज्ञानिक पूरे मनोयोग से उसमें कार्य कर रहे हैं। इसलिए हो सकता है कि मानव कल्याण के लिए वो और अच्छी खोज करें।

व्यापक अर्थों में हमारी संस्कृति की विविधतापूर्ण जीवन शैली एवं अनेकता में एकता की बातें उसकी परिपक्वता एवं वैचारिक सुदृढ़ता की परिचायक हैं। हमारी संस्कृति की प्रमुख विशेषताओं के विभिन्न घटकों और उन पर आधारित महत्वपूर्ण जीवन पद्धति व विचार शैली जैसे, खान-पान, पूजा-अर्चना, पहनावा यानी पोशाक, स्वच्छता, संयम व धैर्य हमें न केवल सुकून देते हैं, बल्कि स्वास्थ्यबर्द्धक भी हैं। जब हमलोग अपने गुरुओं, विभिन्न विषयों के विद्वानों के कथनों-उपदेशों को अपने जीवन पद्धति का अंग बनाते हैं तो उसके क्रम में काफी चीजें खुद ब खुद हमारी दिनचर्या में शामिल हो जाती हैं, जो जनजीवन के लिए लाभदायक व प्रेरणादायक होती हैं। जैसे, काढ़ा में प्रयुक्त होने वाली खान-पान की वस्तुओं का चलन एवं प्रचलन आज से नहीं है, बल्कि सदियों से हमारी भारतीय संस्कृति के घटक खान-पान एवं भोजन पद्धति का विशेष अंग एवं विशेषता रही हैं। जिसके फलस्वरूप हम अपने खान-पान, भोजन पद्धति के आधार पर रोग प्रतिरोधक क्षमता को मजबूत करें और उन्हें सुदृढ़ बनाकर किसी भी रोग के संक्रमण की लड़ाई लड़ने की कला में पूर्व से ही सिद्धहस्त हैं।

दरअसल, वह ज्ञान एवं संस्कृति पर आधारित भोजन पद्धति है, जिसने इस समय अपनी प्रासंगिकता के कारण सभी को आकर्षित किया है। सादा जीवन उच्च विचार, शाकाहारी भोजन एवं प्रकृति की उत्कृष्ट गोद में बसने की चेतना व वहां उपलब्ध या उससे प्रभावित हमारी भोजन व्यवस्था को रोग प्रतिरोधक क्षमता की बढ़ोतरी का संदर्भ देने वाली हमारी सनातन वैष्णव भोजन पद्धति भी बहुत उपयोगी रही है।

देखा जाता है कि जब हमारी रोग प्रतिरोधक क्षमता कमजोर रहती है तो ऐसा खान-पीन यानी भोजन पद्धति, जो मांसाहार या उनसे बने उत्पाद पर आधारित होती है, का परित्याग कर दिया जाता है, क्योंकि उनसे पाचन तंत्र ठीक नहीं होता है। इसलिए आज के परिदृश्य में पाचन योग्य भोजन पद्धति यानी सत्य सनातन आहार विहार पद्धति ही रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए अधिक कारगर है।

दरअसल, सत्य सनातन आहार विहार पद्धति वनस्पति एवं प्रकृति पर आधारित है। यह हमारी धरती माता द्वारा हमारे जीवन के लिए दिया हुआ बहुत ही अमूल्य उपहार है। गौर कीजिए कि महामारी में जीवन दायी काढ़ा के विभिन्न अवयव यानी घटक यथा हल्दी, काली मिर्च, जीरा, धनिया, दाल चीनी, लॉन्ग, अजवायन, इलायची, सोंठ, मीठी नीम, तुलसी, पुदीना इत्यादि हमारे जीवन के लिए कितना उपयोगी साबित हुए हैं।

हमारे लिए हर्ष का विषय यह है कि गरम मसाला के रूप में या देशी दवा के रूप में इनका उपयोग हमारे घर-घर में होता आया है। हमारी भारतीय संस्कृति की भोजन व्यवस्था में स्वास्थ्य की दृष्टि से उनका उपयोग सुदीर्घ कालखंड यानी पुरातन समय से ही हो रहा है। यही कारण है कि कोरोना महामारी के खतरे से भी हम सब महफूज रहे तथा इस अदृश्य वायरस के खिलाफ अपनी लड़ाई को आक्रामकता से लड़े। कहना न होगा कि हमारी संस्कृति ने हमें रोगाणुओं के ऐसे तत्वों से लड़ने एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता विकसित करने की परंपरा को शुरू से ही विकसित किए हुए थी, उसका लाभ पहले भी मिला था, आज भी मिल रहा है, आगे भी मिलेगा।

इसीलिए इनके प्रयोग को बढ़ाने के लिए कोई व्यक्ति एवं संस्था अपना विशेष योगदान न माने, क्योंकि यह भारतीय संस्कृति की भोजन पद्धति के अनुपालना की बहुत ही प्राचीन व्यवस्था है। अब जरूरत है, भारतीय संस्कृति के मौलिक घटकों को सुदृढ़ बनाने की, उसकी निरंतरता व निःस्वार्थता को बनाए रखने की। ऐसा इसलिए कि भारतीय संस्कृति जीवंत है।

लेखक उत्तरप्रदेश संगीत नाटक अकादमी के सचिव हैं। यहां व्यक्त विचार उनके निजी हैं।